राजस्थान के लोक वाद्ययंत्र

लोक वाद्य लोकसंगीत के महत्वपूर्ण अंग होते है एवं बिना वाद्य के संगीत सूना है। इनके प्रयोग से गीतों व नृत्यों की माधुर्य वृद्धि के साथ ही वातावरण निर्माण एवं किसी कलाकार की भवाभिव्यक्ति को प्रभावशाली बनाने का कार्य होता है। अत: राजस्थान के लोकसंगीत में यहाँ के परिवेश, स्थिति व भावों के अनुरूप लोक वाद्यों का प्रचुर विकास हुआ है, जिनका वर्गीकरण निम्न प्रकार से है

- तत्
- अवनद्ध
- घन
- सुषिर

1.तत् वाद्य: जिन वाद्यों में तारों के द्वारा स्वरों की उत्पत्ति होती है वे तत् वाद्य कहलाते है। राजस्थान के लोकसंगीत में प्रयोग लिए जाने वाले तत् वाद्यों की सूची इस प्रकार है

- **सारंगी**
  - यह वाद्य तून, सागवान, कैर या रोहिड़े की लकड़ी से बनाया जाता है। इसमें कुल 27 तार होते है एवं ऊपर की तारें बकरे की आंतों से बनी होती है।
  - इसका वादन गज से किया जाता है जो घोड़े की पूंछ के बालों से निर्मित होता है। गज को बिरोजा पर घिसकर बजाने पर तारों से ध्वनि उत्पन्न होती है।
  - राजस्थान में दो तरह की सारंगियाँ प्रचलित है- सिन्धी सारंगी व गुजरातण सारंगी । गुजरातण सारंगी की तुलना में सिन्धी सारंगी आकार में बड़ी एवं उन्नत व विकसित होती है। गुजरातण सारंगी में तारों की संख्या केवल 7 होती है।
  - मारवाड़ के जोगियों द्वारा गोपीचन्द, भृतहरि, निहालदे आदि के ख्याल गाते समय एवं बाड़मेर व जैसलमेर क्षेत्र की लंगा जाति द्वारा सारंगी का प्रयोग किया जाता है।
- **जन्तर**
  - यह वीणा के सादृश्य होता है। इसे वीणा का प्रारम्भिक रूप कहा जा सकता है क्योंकि वीणा के समान इसमें भी दोनों ओर दो तुम्बे होते है जो कि गूँज के साथ ध्वनि उत्पन्न करते है।
  - यह वाद्य अंदर से खोखला होता है। इस यंत्र की खोखली संरचना, जिसे डाँड कहा जाता है, बाँस की बनी होता है। जन्तर वाद्य पर मगर की खाल के 22 पर्दे मोम से चिपकाये जाते है एवं इन पर्दों के ऊपर पाँच या छ: तार लगे होते है, जिन्हें हाथ की अँगुली या अँगूठे से बजाया जाता है।
  - इस वाद्य का वादन खड़े होकर गले में लटकाकर किया जाता है।
  - इसका प्रयोग मुख्यत: भोपों द्वारा देवनारायण जी की फड़ व भजन गाते समय किया जाता है। जन्तर वाद्य के वादन बगैर इस फड़ का बाँचना अधूरा माना जाता है।
- **रावणहत्था**
  - यह राजस्थान का बहुत प्राचीन व बहुप्रचलित लोक वाद्य है एवं इसे वायलिन का प्रारम्भिक रूप कहा जा सकता है।
  - इसे बनाने के लिए बड़े नरियल की अर्द्ध कटोरी पर बकरी की खाल मढ़ी जाती है जो 80-90 से.मी. लंबे बाँस के साथ लगी होती है।
  - बाँस में जगह-जगह छिद्र कर खूँटियाँ लगा दी जाती है, जिनमें 9 तार बंधे होते है।
  - इस वाद्य का गज घोड़े के पूंछ के बालों से निर्मित होता है एवं गज के अंतिम छोर पर घुंघुरू बंधे होते है जो उसके संचालन के साथ ध्वनि उत्पन्न कर ताल कार्य ही करते है।
  - इस वाद्य का प्रयोग मुख्यत: भोपों व भीलों द्वारा पाबूजी की फड़ व अन्य देवी-देवताओं के भजन व गीत गाते समय किया जाता है।
- **रवाज**
  - यह सारंगी की तरह का वाद्य है, जिसे गज के स्थान पर नखे (नाखून) से आघात करके बजाया जाता है। इसमें तारों की संख्या 12 होती है।
  - इस वाद्य को ढफ भी कहा जाता है एवं यह वाद्य मेवाड़ के राव व भाट जाति के लोग अधिक बजाते है।

- **तंदुरा, चौतारा, निशान, तम्बूरा**
    - इन चारों नामों से एक ही प्रकार का वाद्य राजस्थान में प्रचलित है, इस वाद्य की आकृति तानपूरे से मिलती है।
    - यह चार तारों वाला वाद्य है जिसका निर्माण लकड़ी से होता है।
    - वादक इसे बायें हाथ में पकड़कर दाहिने हाथ की पहली उंगली में मिजराब पहिनकर बजाता है।
    - इसे मुख्यत: रामदेवजी के भजन गाते समय कामड़ जाति के लोग व निर्गुण भजन करने वाले नाथपंथी बजाते है।
- **एकतारा**
    - एकतारा का अर्थ है एक तार। यह वाद्य गोल तुम्बे में बाँस की डंडी फँसाकर बनाया जाता है। तुम्बे का एक हिस्सा काटकर इसे बकरे के चमड़े से मढ़ दिया जाता है। बाँस पर दो खूँटियाँ लगी होती है जिन पर ऊपर-नीचे दो तार बंधे होते है।
    - यह एक ही हाथ में पकड़कर बजाया जाता है और दूसरे हाथ में करताल बजायी जाती है।
    - इसको मुख्यत: कालबेलिया एवं नाथ-संप्रदाय के साधु-संन्यासी बजाते है।
- **भपंग**
    - इसका आकार डमरूनुमा होता है। यह खोखले तम्बू के गोले से बना दो मुंहा वाद्य है जिसको एक ओर से बकरे के चमड़े से मढ़ते है तथा दूसरी ओर से खुला छोड़ दिया जाता है।
    - चमड़े के बीच में से छेद कर एक तार निकाला जाता है जिसे एक खूँटी से बाँध दिया जाता है। खूँटी को तानते व ढीला करते हुए विभिन्न ध्वनियाँ निकली जाती है। इस यंत्र को काँख में दबाकर बजाते है।
    - वर्तमान में इसे प्लास्टिक के तन्तु से बनाते है। इस वाद्य का प्रयोग आमतौर पर मेवात के जोगी समुदाय द्वारा प्रधानता से किया जाता है।
    - अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर ख्याति प्राप्त जहुर खाँ इस वाद्य के प्रसिद्ध कलाकार है।
- **कमायचा**
    - यह सारंगी के समान होता है किन्तु इसकी तबली सारंगी की तबली की अपेक्षा चौड़ी व गोल तथा चमड़े से मढ़ी हुई होती है।
    - कमायचा की चमड़े से मढ़ी हुई तबली पर खूँटी प्रणाली एवं घुड़च उपस्थित रहते है।
    - कमायचा की तबली के चौड़ी एवं गोलाकार होने के कारण इसकी ध्वनि में भारीपन व गूँज होती है।
    - इसे बनाजे का गज भी सारंगी की गज से लाभग डेढ़ा होता है एवं घोड़े की पूंछ के बालों से बना होता है।
    - इसमें 27 तार होते है जिसमें से 3 तार घुड़च के ठीक ऊपर से निकलते है।
    - इसका सर्वाधिक प्रयोग मुस्लिम शेख, जिन्हें मांगणियार भी कहते है, लोकगीत व मांड गायन के दौरान करते है।
    - साकर खाँ इस वाद्य के प्रसिद्ध कलाकार है जिन्हें अपनी इस अनूठी कला के लिए पद्मश्री मिल चुका है।
- **गुजरी**
    - यह रावणहत्था से थोड़ा छोटा उसी प्रकार का वाद्य है एवं इसमें 5 तार होते है। इसका गज अर्द्धचंद्राकार होता है।
- **सुरिंदा**
    - रोहिड़े की लकड़ी से बने इस वाद्य के गज पर घुंघुरू बंधे होते है एवं इसे गायन के साथ नहीं बजाया जाता है।
- **चिकारा**
    - कैर की लकड़ी का बना इस वाद्य का एक सिरा प्याले के आकार का होता है जिसमें 3 तार बंधे होते है। इसे छोटी गज की सहायता से बजाया आता है।
- **दुकाको**
    - इसे घुटनों के बीच रखकर बजाया जाता है। आमतौर पर भील जाति के लोगों द्वारा दीपावली के अवसर पर इस वाद्य को बजाया जाता है।

2.सुषिर: वे वाद्य जिन्हें फूँक कर बजाया जाता है सुषिर वाद्य-यंत्रों की श्रेणी में आते है। ये निम्न है-

- **बांसुरी**
    - यह एक अति प्राचीन लोक वाद्य है जो समय के साथ परिष्कृत हो विभिन्न संगीत कलाओं का अभिन्न अंग बन चुका है।
    - इसे पारंपरिक रूप से बाँस की पोली नली से बनाया जाता है। पोली नली में स्वरों को लिए छ: या सात छेद बनाया जाते है जिनकी दूरियाँ स्वरों की शुद्धता के लिए निश्चित रखी जाती है।
    - बांसुरी के एक छोर पर एक छेद होता है जो वादक द्वारा फूँक देकर संगीत उत्पन्न करने हेतु होता है। आमतौर पर बांसुरी का यह छोर क्षैतिज रूप से नीचे की ओर तिरछा होता है।

- **अलगोजा**
  - अलगोजा राजस्थान का राज्य वाद्य है। यह बांसुरी की तरह का होता है। इसमें दो बांसुरियों का जोड़ा होता है जो एक साथ बजाया जाता है।
  - इसमें समान्यत: एक बांसुरी का आकार दूसरी के बड़ा होता है एवं इन बांसुरियों में कुछ में 3 तथा कुछ में 5 छेद होते है जो स्वरों की शुद्धता के लिए निश्चित दूरी पर होते है।
  - वादक दो अलगोजे मुँह में रखकर एक साथ बजाता है जिसमें एक अलगोजे पर 'सा' ध्वनि बजती रहती है तथा दूसरे पर भिन्न-भिन्न स्वर निकाले जाते है।वादक बिना रुके तेजी से इसमें फूँकता है जिससे ध्वनि उत्पन्न होती है एवं दोनों तरफ अपनी अंगुलियों का प्रयोग कर स्वरों में भिन्नता लाता है।
  - यह वाद्य जैसलमेर, जोधपुर, बाड़मेर, बीकानेर, जयपुर, एवं टोंक आदि क्षेत्रों में मुख्य रूप से बजाया जाता है।
  - अलगोजा को वीर तेजाजी की जीवन गाथा, डिग्गीपुरी का राजा, ढोला-मारू नृत्य और चक्का भवाई नृत्य में भी बजाया जाता है।
  - इसका प्रयोग भील व कालबेलिया जातियाँ प्रधानता से करती है एवं जयपुर के पदमपुरा गाँव के प्रसिद्ध कलाकार **रामनाथ चौधरी** नाक से अलगोजा बजाते है।
- **पूँगी**
  - इस वाद्य में सर्पकों मोहित करने की अद्भुत क्षमता होती है इसलिए मुख्यत: सपेरों द्वारा प्रयोग में लिया जाता है।
  - यह वाद्य घीया तुम्बे का बना होता है जिसका ऊपरी हिस्सा लंबा एवं नीचे का हिस्सा गोल होता है। गोल हिस्से में दो छिद्रित नालियाँ लगाई जाती है जिसमें हवा फूँकने पर एक नली में से "सा" स्वर बजता रहता है जबकि दूसरी नली से भिन्न-भिन्न स्वर उत्पन्न किए जाते है।
  - यह कालबेलियों व आदिवासियों का प्रसिद्ध वाद्य है।
- **मुरला/मुरली**
  - यह पूँगी का परिष्कृत रूप है। इसे नलीदार तुम्बे के नीचे चौड़े भाग में दो बाँस की नालियाँ फँसाकर बनाया जाता है एवं इन नालियों से ध्वनि उत्पन्न की जाती है।
- **शंख**
  - समुद्र से प्राप्त इस वाद्य का प्रयोग देवी-देवताओं की आराधना के दौरान मंदिरों में किया जाता है। इसका प्रयोग युद्ध के प्रारम्भ के पूर्व भी किया जाता है।
- **शहनाई**
  - यह सुषिर वाद्यों में सर्वश्रेष्ठ व सुरीला वाद्य है। इसकी ध्वनि शुभ मानी जाती है अत: प्राचीन राजा-महाराजाओं के यहाँ ये सदैव बजती थी एवं विवाह उत्सवों में मुख्यत: इसे बजाया जाता है।
  - इसे शीशम, सागवान या टाली लकड़ी से बनाया जाता है। इसका आकार चिलम के समान होता है। इसमें आठ छेद होते है एवं इसका पत्ता ताड़ के पत्ते का बना होता है। सामन्यत: इसे नगाड़े की संगत में बजाया जाता है।
  - मेवाड़ की माँगीबाई इस वाद्य की प्रसिद्ध लोकप्रिय कलाकार है।
- **सतारा**
  - यह अलगोजा, बांसुरी व शहनाई का समन्वित वाद्य है।
  - अलगोजे की भाँति इसमें दो लंम्बी बांसुरियाँ होती है जिनमें से एक आधार स्वर देती है तथा दूसरी बांसुरी के छ: छेदों को बजाकर भिन्न-भिन्न स्वर उत्पन्न किए जाते है।
  - इस वाद्य की बड़ी विशेषता यह कि किसी भी इच्छित छेद को बंद करके आवश्यकतानुसार सप्तक में परिवर्तित किया जा सकता है। इस सुविधा ने इस वाद्य को अत्यंत उन्नत बना दिया है।
  - इस वाद्य को मुख्यत: जैसलमेर व बाड़मेर की जन-जातियों द्वारा प्रयोग में लिया जाता है।
- **मोरचंग**
  - यह लोहे का बना छोटा सा वाद्य है, जिसे ओठों के बीच रखकर बजाया जाता है।
  - इसमें एक धातु के बने गोलाकार हैंडिल से दो छोटी व लंबी धातु की छड़े निकली होती है। इन दो छड़ों के बीच में लोहे की एक पतली लंबी रीड रहती है जिसके मुँह पर थोड़ा सा घुमाव दे दिया जाता है।
  - इस वाद्य को ओठों से दबाने के बाद श्वास-प्रश्वास से रीड में कंपन्न होता है और इस तरंगित रीड के मुड़े हुए हिस्से पर अँगुली से आघात करके स्वर व लयपूर्ण ध्वनि निकाली जाती है।
- **बांकिया**

- यह पीतल से निर्मित बिगुल की आकृति समान वाद्य है जिसके एक ओर के छोटे मुँह में फूँक मारकर बजाया जाता है।
- यह सरगड़ों का खानदानी वाद्य है जिसे ढ़ोल व थाली की संगत में बजाया जाता है।

- **मशक**
  - मशक को बकरी के चमड़े की सिलाई कर बनाया जाता है। इसमें एक ओर से मुँह से हवा भरी जाती है एवं दूसरी ओर आगी हुई नली के छेदों से स्वर निकाले जाते है।
  - इसकी ध्वनि पूँगी की तरह है एवं इसका प्रयोग भेंरूजी के भोपें अधिक करते है।
- **भूंगल**
  - यह मेवाड़ की भवाई जाति का प्रमुख वाद्य है जो गाँव में खेल शुरू होने से पहले जनता को एकत्रित करने के लिए बजाया जाता है।
  - पीतल की लंबी नली से बना यह वाद्य बिगुल की भाँति युद्ध शुरू करने के पूर्व भी बजाया जाता है।
- **नागफणी**
  - यह वाद्य पीतल की सर्पाकार नली का होता है जिसके पिछले हिस्से में एक छेद होता है।
- **करणा**
  - यह पीतल का 7-8 फीट लंबा नोकदार वाद्य है । इस वाद्य के सकड़े मुँह पर एक छेद होता है जिसमें सुरनाई जैसी नली लगी होती है।

तुरही

  - यह पीतल की दो मुँहा नली से बना वाद्य है जिसकी आकृति नोकदार होती है। इसका एक मुँह छोटा एवं दूसरा मुँह चौड़ा होता है।
- **सुरनाई**
  - इसकी आकृति शहनाई से मिलती है एवं इसके मुँह पर खजूर, ताड़ व कगोर के वृक्ष का सरकण्डा लगा होता है। इस वाद्य को गीला करके बजाया जाता है।
  - ढोली, लंगा, मांगणियार, ढाढ़ी जाति के लोगो द्वारा इसे विवाह आदि मांगलिक अवसरों पर बजाया जाता है।
  - अन्य सुषिर वाद्य- सींगी, टोटो, बरगू, हरनाई, नड़ आदि।

3.अवनद्ध: इस श्रेणी में चमड़े से मढ़े वे वाद्य आते है जिनके चमड़े वाले भाग पर आघात कर ताल उत्पन्न की जाती है।

- **मृदंग**
  - ताल वाद्य यंत्रों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण वाद्य है। इसे बीजा, सुपारी, वट आदि वृक्षों की लकड़ी को खोखला करके बनाया जाता है। इस का एक मुँह सकड़ा एवं दूसरा मुँह चौड़ा होता है, दोनों मुँहों को बकरे की खाल से मढ़ा जाता है।
  - दोनों मुँहों पर मढ़ी हुई बकरे की खाल को, मृदंग के परिधि पर चमड़े की बनी रस्सियों से परस्पर जोड़ा जाता है।
  - धार्मिक उत्सवों पर इसका प्रयोग किया जाता है एवं राजस्थान में रावल और राविया जाति के लोग नृत्य के साथ भी इसका प्रयोग करते है।
- **पखावज**
  - दो मुँहा खोखली लकड़ी के दोनों छोरों पर चमड़े को मढ़ कर इस वाद्य यंत्र को बनाया जाता है एवं इस वाद्य की आकृति प्राचीन मृदंग की आकृति के समान होती है।
  - पखवाज़ के प्रसिद्ध वादक पण्डित पुरषोत्तम दास को अपनी अनूठी कलाकारी के लिए पद्मश्री से सम्मानित किया गया है।
- **ढोलक**
  - यह लकड़ी को खोखला करके बनाया गया वाद्य है जिसके दोनों छोर लगभग समान व्यास के होते है।
  - इसका मध्य भाग कुछ चौड़ा होता है एवं इस पर लगी रस्सियाँ, जो दोनों छोरों को जोड़ने का कार्य करती है, पर कड़ियाँ लगी रहती है।
  - राजस्थान में नगारची, सांसी, कंजर, ढाढ़ी, मीरासी, कव्वाल, भवाई व विभिन्न संप्रदायों के साधु-संत आदि इसे बजाते है। भवाई नृत्य के दौरान प्रयोग ली जाने वाली ढोलक आकार में सबसे बड़ी होती है।
- **ढोल**

- यह एक दो मुँहे बैरल की आकृति का होता है इसे विभिन्न संगीत कलाओं में सहायक वाद्य के रूप में बजाया जाता है।
- यह वाद्य पहले लकड़ी का बनाया जाता था, किन्तु अकबर के समय से लोहे का बनने लगा। इस लोहे के खोल को दोनों ओर से चमड़े से मढ़ा जाता है।
- इसे एक मांगलिक वाद्य माना जाता है एवं राजस्थान में इसे बजाने के 12 प्रकार है जैसे- गैर का ढोल, नाच का ढोल, आरती का ढोल आदि।
- लोक नृत्यों में भी इसका प्रचुर प्रचलन है जैसे- जालौर का ढोल नृत्य, भीलों का गैर नृत्य एवं शेखवाटी का कच्छी घोड़ी नृत्य में इत्यादि।
- इसे हाथों एवं डंडों दोनों से बजाया जाता है एवं राजस्थान में ढोली, सरगड़े, भील, भांभीआदि इसे कुशलता से बजाते है।

- **नगाड़ा**
  - यह वाद्य युगल रूप में होता है जिसमें से एक को नर नगाड़ा व दूसरे को मादा नगाड़ा कहा जाता है।
  - यह सुपारी की आकृति जैसा होता है जिसका व्यास 1-2 फीट तक होता है। इस वाद्य को भैंसे की खाल से मढ़ा जाता है।
  - ढोल, राणा, मीरासी जातियों के लोग इसे लोकनृत्यों में प्रधानता से बजाते है। लोकनृत्यों में नगाड़े के साथ शहनाई की संगत की जाती है।
- **नौबत**
  - यह मंदिरों में प्रयुक्त होने वाला ताल वाद्य है एवं इसे बबूल या शीशम के डंकों का आघात करके बजाया जाता है।
- **मादल**
  - प्राचीन लोक वाद्य, मादल की आकृति मृदंग के समान होती है एवं यह मिट्टी से बना होता है।
  - मादल के दोनों मुँह, जिसमें एक मुँह छोटा व दूसरा बड़ा होता है, को हिरण या बकरे की खाल से मढ़ा जाता है।
  - भील लोक गवरी नृत्य के साथ तथा शादियों में व ग्राम्य देवी-देवालयों में इसे बजाते है एवं इसे साथ थाली वाद्य भी बजाया जाता है।
- **चंग**
  - यह राजस्थान का लोकप्रिय वाद्य है जिसे होली के अवसर पर मुख्यत: शेखवाटी क्षेत्र में बजाया जाता है।
  - यह लकड़ी के गोल घेरे के रूप में होता है जिसे एक ओर से बकरे या भेड़ की खाल से मढ़ा जाता है तथा दूसरी ओर को खुला छोड़ दिया जाता है।
  - इसे बायें हाथ की हथेली पर टिकाकर दाहिने हाथ से गीत गाते समय बजाया जाता है।
  - कालबेलिया जाति के लोग इसे प्रधानता से बजाते है एवं इस पर प्रमुखत: **कहरवा ताल** बजायी जाती है।
- **खंजरी**
  - आम की लकड़ी से बने इस वाद्य को, एक ओर से खाल से मढ़ा जाता है एवं इसे दाहिने हाथ से पकड़कर बायें हाथ से बजाया जाता है।
  - कामड़ बालई, भील, नाथ, कालबेलिया आदि लोग इसे मुख्य रूप से बजाते है।
- **डमरू**
  - यह दो मुँहा छोटे बैरल की आकृति का होता है जिसके दोनों मुँहों पर चमड़ा मढ़ा जाता है। इसके बीच के पतले हिस्से में चमड़े की दो डोरियाँ बँधी होती है जिनके सिरों पर घूघरू या मोती लगे होते है। इसे बजाने के लिए बीच से पकड़कर हिलना पड़ता है।
- **डैंरू**
  - यह डमरू का बड़ा रूप है एवं आम की लकड़ी का बना होता है। इसे बायें हाथ से पकड़कर,दाहिने हाथ द्वारा लकड़ी की डंडी से आघात कर बजाया जाता है।
  - आमतौर पर इसके संगत में थाली व काँसे का कटोरा भी बजाया जाता है।
- **ढाक**
  - यह वाद्य डैंरूनुमा, किन्तु उससे आकार में बड़ा होता है। इस वाद्य को विभिन्न अवसरों व त्यौहारों पर गुर्जर जाति के लोगों द्वारा दोनों पैरों पर रखकर बजाया जाता है।
- **डफ**
  - यह लोहे के बने गोल घेरे पर खाल मढ़कर बना वाद्य है जिसे एक हाथ द्वारा डंडे की सहायता से आघात कर बजाया जाता है। इसी वाद्य का छोटा रूप डफली होता है।

- **पाबू जी के माटे**
  - मिट्टी के बड़े बर्तनों के मुख पर खाल मढ़कर एवं रस्सी से बाँधकर यह वाद्य बना जाता है। थोरी या नायक जाति के लोगों द्वारा पाबूजी के पवाड़े गाते समय इसे बजाया जाता है।
- **धौंसा**
  - इसे आम की लकड़ी से बने घेरे पर भैंसे की खाल मढ़कर बनाया जाता है एवं लकड़ी के मोटे डंडों की सहायता से बजाया जाता है।
- **ताशा**
  - यह लोहे या मिट्टी के छापते कटोरों पर बकरे की खाल मढ़कर बनाया जाता है एवं गले में लटकाकर दो पतली डंडियों से बजाया जाता है। यह वाद्य मुस्लिम समुदाय में अधिक प्रचलित है।
- **दमामा**
  - यह कढ़ाई के आकार का लोहे का बहुत बड़ा नगाड़ा है जो भैंसे की खाल से मढ़ा जाता है। इसे दो बड़े व भारी डंडों से बजाया जाता है। इसे मुख्य रूप से युद्ध के वाद्यों के साथ बजाया जाता था।
- **घेरा**
  - अष्ट भुजाकार आकृति वाले इस वाद्य के एक ओर चमड़ा मढ़ा जाता है। लकड़ी के डंडे के ऊपरी भाग पर कपड़ा लपेटकर इसे बजाया जाता है।

4.घन: धातु से निर्मित वाद्य इस श्रेणी के वाद्य होते है।

- **मंजीरा**
  - यह पीतल व काँसे की मिश्रित धातु का छोटा गोलाकार वाद्य होता है।
  - इसमें दो मंजीरों को आपस में घर्षित कर ध्वनि उत्पन्न की जाती है।
  - होली व निर्गुण भक्ति के भजन गाते समय इनके साथ तंदुरे व एकतारें का प्रयोग भी किया जाता है। कामड़ जाति की महिलाएँ तेरहताली नृत्य के दौरान अपने शरीर पर 13 मंजीरे धारण कर मधुर ध्वनि उत्पन्न करती है। रामदेवजी के भोपें भी भजन गायन के दौरान इनका परयोग करते है।
- **झांझ**
  - यह मंजीरे का बड़ा रूप है। यह शेखावाटी क्षेत्र का प्रसिद्ध वाद्य है एवं इसे कच्छी घोड़ी नृत्य में ताशे की संगत में प्रयोग लिया जाता है।
- **थाली**
  - इसे काँसे की थाली के एक किनारे पर छेद कर एवं उसमें रस्सी बाँधकर अँगूठे से लटकाकर लकड़ी के डंडे के आघात द्वारा बजाया जाता है।
  - भील, कालबेलिया आदि जातियाँ इसे विशेष रूप से बजाती है।
- **खड़ताल**
  - खड़ताल शब्द करताल (हाथों से उत्पन्न ध्वनि) से बना है।
  - इस वाद्य में दो लकड़ी की टुकड़ों में बीच में पीतक की छोटी-छोटी तश्तरियाँ लगी रहती है जो की लकड़ी के टुकड़ों के परस्पर टकराने से मधुर स्वर व ध्वनि उत्पन्न करती है।
  - खड़ताल का प्रयोग विशेषत: भक्तजनों व साधु-संतों द्वारा भजन व धार्मिक गीत गाते समय किया जाता है एवं इसे इकतारे की संगत में बजाया जाता है।
  - बाड़मेर क्षेत्र के प्रसिद्ध कलाकार सद्दीक खाँ खड़ताल बजाने में दक्ष है एवं इन्हें खड़ताल का जादूगर कहा जाता है।
- **चिमटा**
  - यह लोहे की दो पतली पट्टिकाओं से मिलकर बना होता है एवं इन पट्टिकाओं के बीच लोहे की गोल-गोल छोटी पत्तियाँ लगी होती है।
  - इसे बायें हाथ में पकड़कर, दायें हाथ की अंगुलियों से भजन-कीर्तन के समय बजाया जाता है।
- **घण्टा/घड़ियाल**
  - यह पीतल या अन्य धातु का गोलाकार वाद्य है जिसे डोरी से लटकाकर हथोड़े व इसके अंदर लटके हुए डंडे से आघात कर बजाया जाता है।
  - इसका प्रयोग मुख्यत: मंदिरों में किया जाता है एवं इसी का छोटा रूप घण्टी कहलाता है।
- **भरनी**

- यह वाद्य, मिट्टी के मटके के सकड़े मुँह पर काँसे की प्लेट ढँककर बनाया जाता है जिसे दो डंडियों की सहायता से बजाया जाता है।
- यह मुख्यत: भरतपुर-अलवर क्षेत्र में लोकदेवताओं के यहाँ सर्प के काटे हुए व्यक्ति का इलाज करते समय बजाया जाता है।

- **रमझोल**
  - इसमें चमड़े की पट्टी पर बहुत सारे छोटे-छोटे घुंघुरू सिले होते है। जिन्हें नृत्य करते समय दोनों पैरों पर बाँधा जाता है एवं इसमें लगे घुंघुरू शरीर के संचालन के साथ मधुर ध्वनि उत्पन्न करते है।
  - होली पर गैर नृत्य करने वाले एवं भील लोग विभिन्न चक्राकार नृत्यों में इसका प्रयोग करते है।
- **घुरालियो**
  - यह वाद्य बाँस की खपच्चियों से बनाया जाता है। इस खपच्ची को एक ओर से छीलकर उस पर धागा बाँध दिया जाता है।
  - इसे दाँतों के बीच दबाकर धागे को ढील व तनाव देकर बजाया जाता है।

Springboard ACADEMY

राजस्थान के आभूषण

राजस्थान विभिन्न रियासतों की भूमि रही है अत: यहाँ के स्त्रियाँ व पुरुषों का आभूषणों के प्रति लागव स्वाभाविक है। यहाँ विभिन्न पर्वों व अवसरों के अनुरूप आभूषणों का निर्माण किया गया, इन आभूषणों ने इन्हें पहनने वालों के सौंदर्य को और अधिक बढ़ाने का कार्य किया। समय के अनुरूप आभूषणों की इस निर्मिति शैली में काफी बदलाव आये है।

महिलाओं के आभूषण

1.सिर व मस्तक पर पहने जाने वाले आभूषण: सिर पर बांधे जाने वाले आभूषणों को चूड़ा रत्न भी कहा जाता है।

- शीशफूल: इसे मस्तक के पीछे बालों पर दोनों ओर सोने की बारीक साकल बाँध कर ललाट पर लटकाई जाती है।
- बोर/बोरला: यह मोटे बोर (खाने का बोर) के आकार (गोलाकार) में बना सोने या चाँदी से बना होता है। इसके आगे के भाग में छोटे-छोटे दाने उभरे होते है तथा उसके पीछे के भाग में छोटा हुक होता है। हुक में धागा बांधकर महिलाएँ सिर के बालों के मध्य ललाट पर लटकते हुए बांधती है।
- रखड़ी: यह बोर के समान गोलाकार आकृति में होती है। इसमें कीमती पत्थर के नगों की जड़ाई की जाती है। रखड़ी को सी पर मांग के ऊपर बांधा जाता है।
- बिंदी/टीकी: यह सुहागिन स्त्री को शोभा बढ़ाने वाला आभूषण हैं जिसे महिलाएँ ललाट के मध्य में लगाती है।
- **मैमंद:** यह स्त्रियों के माथे पर पहनने का आभूषण है। इस आभूषण पर लोकगीत भी गाये जाते हैं।
- टिड्डी भलकों: यह महिला के मांग भरने के नीचे ललाट पर पहने जाने वाला आभूषण है।
- गोफण: यह महिलाओं के बालों की वेणी (बालों की छोटी लटें) में गुथा जाने वाला आभूषण है।

2.कान के आभूषण

- कर्ण फूल: यह कान के नीचले भाग का पुष्पाकार आभूषण होता है इस आभूषण के मध्य नगीने जड़े होते है।
- झूमका: यह कर्णफूल जैसा होता है, लेकिन इसके बीच में सोने के गोल बुंदे बने होते है और इसके चैन भी लगायी जाती है, जो कानों के चारों ओर लपेटी जाती है।
- फूलझूमका:यह दो प्रकार का होता है, एक घंटी के आकार का एवं दूसरा पुष्प के आकार का।
- बजटी: यह आभूषण झूमके के साथ लगा होता है।
- पीपल पत्र: यह सोने व चाँदी का गोलाकार आभूषण होता है जिसे कान के ऊपरी हिस्से में छेद करके पहना जाता है।
- ओगन्या: यह पान के पत्ते के समान सोने व चाँदी का आभषण है जो कान के ऊपरी हिस्से में पहना जाता है।
- गुदड़ा: सोने के तार के आगे मुद्रा के आकार का मोती पीरा कर कान में पहना जाने वाला आभूषण है।
- टोटी/ तोटी: यह आभूषण तोते के आकार का होता है तथा कान के नीचले हिस्से में पहना जाता है।
- लटकन: इसका आकार अंगूर के गुच्छे के समान होता है।
- भादरायण: यह कान के ऊपरी सिरे पर पहनने का आभूषण है, जिसकी संख्या 4 से 11 तक होती है।
- कान मे पहने जाने वाले अन्य आभूषण हैं-झेला, जमेला, एवं अगोट्या

3.नाक के आभूषण

- नथ: इस आभूषण को चैन द्वारा मेमंद से जोड़कर नाक में पहना जाता है।
- लौंग: यह सोने या चाँदी से निर्मित मसाले की लौंग की आकृति का आभूषण है जिसके ऊपर घूंडीदार नगीना लगा होता है।
- काँटा: यह सोने या चाँदी के तार से बना आभूषण है जिसके ऊपर सोने या चाँदी से बनी छोटी घूंडी लगी होती है।
- भंवरा/भंवरियो/भँवरकड़ी: यह एक बड़े आकार की लौंग होती है जिसे आमतौर पर विश्नोई समाज की महिलाएँ पहनती है।
- बेसरि: यह सोने के तार का बना होता है जिस पर नाचता हुआ मोर चित्रित होता है। इसे महिलाएँ एक डोरा बाँधकर सिर के बालों में फँसाती है।

- भोगली:यह कांटे की जगह पहनी जाती है। यह थोथी होती है एवं इसका ऊपर का सिरा स्तम्भ के समान होता है।
- नाक के अन्य आभूषण :चोप, चूनी

4.दाँतों के आभूषण

- **चूंप**: दाँतों के बीच में एक छोटा सा छेद बनाकर, उसमें सोने की कील जड़वाई जाती है।
- रखन: यह आभूषण सोने या चाँदी की प्लेट, जिसे दाँतों में लगाया जाता है, का बना होता है।

5.गले के आभूषण

- हार: यह सोने का बना आभूषण है जिसमें कई रत्न जड़े होते है।
- चन्द्रहार: यह चाँद की आकृति जैसा हार का एक प्रकार है जो की शहरी महिलाओं में ज्यादा प्रचलित है।
- झालरा: यह सोने एवं चाँदी की लड़ियों से बना हार होता है जिसमें घूघरियां लगी होती है
- कांठला: यह सोने या चाँदी की छोटी-छोटी गोल, चौकोर एवं तिकोनी पत्तियों से बना आभूषण है एवं इसे छोटे बच्चों के गले में पहनाया जाता है।
- कंठी/चैन: यह सोने की लड़ से बनी बारीक सांकल होती है जिसमें कोई लॉकेट लगा होता है। यह आभूषण मारवाड़ क्षेत्र में अधिक प्रचलित है।
- मुक्तमाला/सुमरगी: यह मोतियों की माला होती है। प्राचीनकाल में अमीर परिवार की महिलाओं में इसका अधिक प्रचलन था।
- हँसली: यह सोने या चाँदी के मोटे तार को जोड़कर बना गोलकार आभूषण होता है एवं ग्रामीण क्षेत्र में बच्चों की हँसली खिसकने से बचाने के लिए पहनाया जाता है।
- ठुस्सी/टुस्सी: यह वर्तमान में प्रचलित नेकलेस से थोड़ा बड़ा व भारी होता है। इसे "गलपटियो" के नाम से भी जाना जाता है।
- **तिमणियाँ/धमण्यों/आड़/टेड्यों:** सोने की तीन लड़ों से बना आभूषण जो चीलों से बनी हुई लड़ियों के बीच चार अंगुल लंबी मोगरे वाली सोने की डंडी लगाकर बनाया जाता है। आमतौर पर यह वर्गाकार आकृति का होता है।
- हमेल: यह सोने से बनाया जाने वाला हारनुमा आभूषण है जो शेखावटी क्षेत्र में सर्वाधिक प्रसिद्ध है।
- खूँगाली/हाँसली: यह सोने या चाँदी का बना गोलाकार आभूषण होता है। यह आभूषण बीच में से चौकोर एवं किनारों पर से पतला होता है एवं इसमें लगे हुक व कुंडी को आपस में फँसाकर इसे गले में पहना जाता है।
- बजंट्टी: यह आभूषण कपड़े की छोटी पट्टी पर सोने के खोखले दानों को पिरोकर बनाया जाता है।
- तांती: किसी देवी-देवता के नाम पर कलाई या गले में चाँदी का तार या धागा बाँधा जाता है उसे तांती कहा जाता है।
- आड़: यह आभूषण वर पक्ष द्वारा शादी में दुल्हन को दिया जाता है। यह सोने का बना चौकोर आभूषण होता है जिस पर सोने के तार लगे होते है। इन तारों के माध्यम से इसे गर्दन में बाँधा जाता है।
- तुलसी: यह छोटे-छोटे मोतियों की माला है जिसे तिमणियाँ और ठुस्सी के साथ पहना जाता है।
- मांदलिया: यह ताबीज की तरह या ढोलक के आकार का छोटा आभूषण होता है जिसे काले डोरे में पिरोकर पहना जाता है।
- रामनामी: यह सोने का बना लंबा गहना होता है जिसके दोनों ओर मांदलिया लगे होते है।
- मंगलसूत्र: यह पत्नी के पति के प्रति प्रेम का प्रतीक है। यह काले मोतियों की माला से बना हारनुमा आभूषण है।
- चंपाकली: यह गले में पहने जाने वाला आभूषण है।
- गले के अन्य आभूषण: मूँठया, पोत, कंठमाला, हंसहार, सरी, कंठी व हांकर

6.हाथ के आभूषण

- चूड़ियाँ: सोने, चाँदी या धातु का बना गोलाकार छोटा आभूषण है। लाख से निर्मित चूड़ी को मोकड़ी व काँच से निर्मित चूड़ी को कातर्या कहते है।
- बंगड़ी: यह चूड़ी के आकार का आभूषण होता है जिस पर सोने की परत चढ़ी होती है।
- नोगरी: यह मोतियों की लड़ियों के समूह से बना आभूषण है जसे हाथ में चूड़ियों के बीच पहना जाता है।
- कड़ा: यह धातु से बना टड्डानुमा आभूषण है जो चूड़ी से मोटा व चौड़ा होता है।
- गजरा: यह छोटे मोतियों से बना आभूषण है जो चूड़ी की तरह ढीला न होकर हाथ पर चिपका रहता है।
- कंकण: यह सोने व चाँदी का बना आभूषण है।
- गोखरू: यह सोने व चाँदी से बना, तिकोने दानेनुमा गोलाकार आभूषण है।
- पुणच/ पूंच: यह कलाई यानी पुणच पर पहने जाने वाला आभूषण है।
- हथफूल/सोवनपान: सोने सी चाँदी की घूघरियोंसे बना यह आभूषण हाथ की हथेली के पीछे पहना जाता है। यह सोने की सांकल के माध्यम से हाथ की चारों अंगुलियाँ, अँगूठे से लेकर पूरी बाहरी हथेली को घेरता है।
- बल्लया: यह एक हाथ का आभूषण है।

7.हाथ की अंगुलियों के आभूषण:

- बीठी/अँगूठी/मूंदड़ी: यह धातु से बना हाथ की अंगुलियों में पहना जाने वाला गोलाकार छल्लों जैसा आभूषण है।
- मुद्रिका: नगीना व अन्य बहुमूल्य रत्न जड़ित अँगूठी, मुद्रिका कहलाती है।
- दामणा/ दामणी: यह दो अंगुलियों में एक साथ पहने जाने वाला अँगूठीनुमा आभूषण है।
- अरसी: अँगूठे की अँगूठी को अरसी कहा जाता है।
- हथफल/हथपान/खड़दावणा: हथेली के पृष्ठ भाग में पहने जाने वाला सोने या चाँदी की घूघरियों वाला फूल जो सांकलों के माध्यम से उँगलियों तक पहुंचता है।

8.हाथ की भूजा के आभूषण:

- टड्डा/अणत: यह तांबे की छड़ से बना चूड़ेनुमा आभूषण है जिस पर सोने या चाँदी की परत चढ़ी होती है। भीलमाल क्षेत्र में इस आभूषण को अड़काणियों कहा जाता है।
- बाजूबंध/ उतरणों: यह सोने के बेल्ट जैसा आभूषण है जिसे विवाह के अवसर पर पहनने का रिवाज है। छोटा आकार का बाजूबंध, भूजबंध कहलाता है।

9.कमर के आभूषण

- **कणकती/कंदोरा**: यह सोने या चाँदी की झूलती श्रृंखलाओं से युक्त पट्टिनुमा आभूषण है।
- सटका: यह सोने या चाँदी के छल्लों से निर्मित आभूषण है जिस पर चाबियाँ लटकी रहती है। इस आभूषण को लहंगे के नेफे में अटकाकर लटकाया जाता है।
- तकड़ी: यह सोने या चाँदी से बना आभूषण है।
- चौथ: चाँदी से बनी चौकोर जालियों की जंजीर को चौथ कहा जाता है।

10.पैर के आभूषण

- कड़ा: यह चाँदी से बना ठोस गोलाकार आभूषण है।
- लंगर: यह आभूषण चांदी या सोने के मोटे तारों को जोड़कर बनाया जाता है तथा कड़े के नीचे पहना जाता है।
- आँवला: यह सोने या चाँदी का बना आँवलानुमा कड़ा होता है। इसके साथ सेवटा भी पहना जाता है। आंवला व सेवटा दोनों पर छिलाई का काम होता है।
- नेवरी: यह पायल की तरह का आभूषण है जो आँवला के साथ पहना जाता है।
- पायल/रमझोल/पायजेब: यह छोटी जंजीरनुमा गोलाकार आभूषण है जिसके नीचे छोटे-छोटे घुंघुरू लगे होते है।
- टणका: यह चाँदी से बना गोलाकार आभूषण है जिसे पैरों में पहनने पर टणक-टणक की आवाज आती है।

- झांझर: यह पायलनुमा आभूषण है जिससे रून-बून की मधुर आवाज आती है।
- तोड़ा/ तोड़ो: यह आभूषण चाँदी के मोटे तारों को जोड़कर बनाया जाता है। यह ऊपर से सकड़ा व नीचे से चौड़ा होता है एवं इसे कड़े के नीचे पहना जाता है।
- हीरानामी: यह चाँदी से बना कड़ेनुमा आभूषण है। यह ग्रामीण एवं आदिवासी महिलाओं में अधिक प्रचलित है।

11.पैर की अंगुलियों के आभूषण

- बिछिया/बिछुड़ी: यह आभूषण सुहाग का प्रतीक है एवं पैर के अँगूठे के पास वाली अंगुली में पहना जाता है।
- गोलमा: यह चाँदी की चौड़ी एवं सादी अंगूठियां होती है जो पैरों की अंगुलियों में पहनी जाती है।
- अंगूठा: यह अँगूठीनुमा आभूषण है जो पाँव के अँगूठे में पहना जाता है।
- पगपान: यह हथफूल की तरह का आभूषण है। इसे पैर के अँगूठे व अंगुलियों के छल्लों को चैन से जोड़कर पायल की तरह पैर के ऊपर हुक से जोड़कर पहना जाता है।

B. पुरुषों के आभूषण

1.अंगुलियों के आभूषण: अँगूठी, मुंदड़ियां

2.कलाई के आभूषण: कड़ा

3.कान के आभूषण: लौंग, मुरकियाँ, झाले, छैलकड़ी

4.गले के आभूषण: चैन, पैंडल, मांदलिया, रामनाभी

5.हाथ की भूजा के आभूषण: भूजबंध, कड़ा, नरमुख

C. बच्चों के आभूषण

1. **हँसुली:** बच्चों के गले का आभूषण

2.कडूल्या: हाथ और पाँव में पहनने वाला कडा

3.नजर्या: सोने का खेरा, मूँग का आखा और रतनचणण बांधकर तैयार किया गया बच्चों के गले का आभूषण जिससे बुरी नजर टलती है।

4.झाँझरिया/पैंजणी: पाँवों में पहनाई जाने वाली पतली सांकली जिसमें घूँघररियाँ लगा दी जाती है।

5.कुड़क: सोने या जस्ते का आभूषण जो की कान छिदवा के पहना जाता है।

राजस्थानी महिला के आभूषण

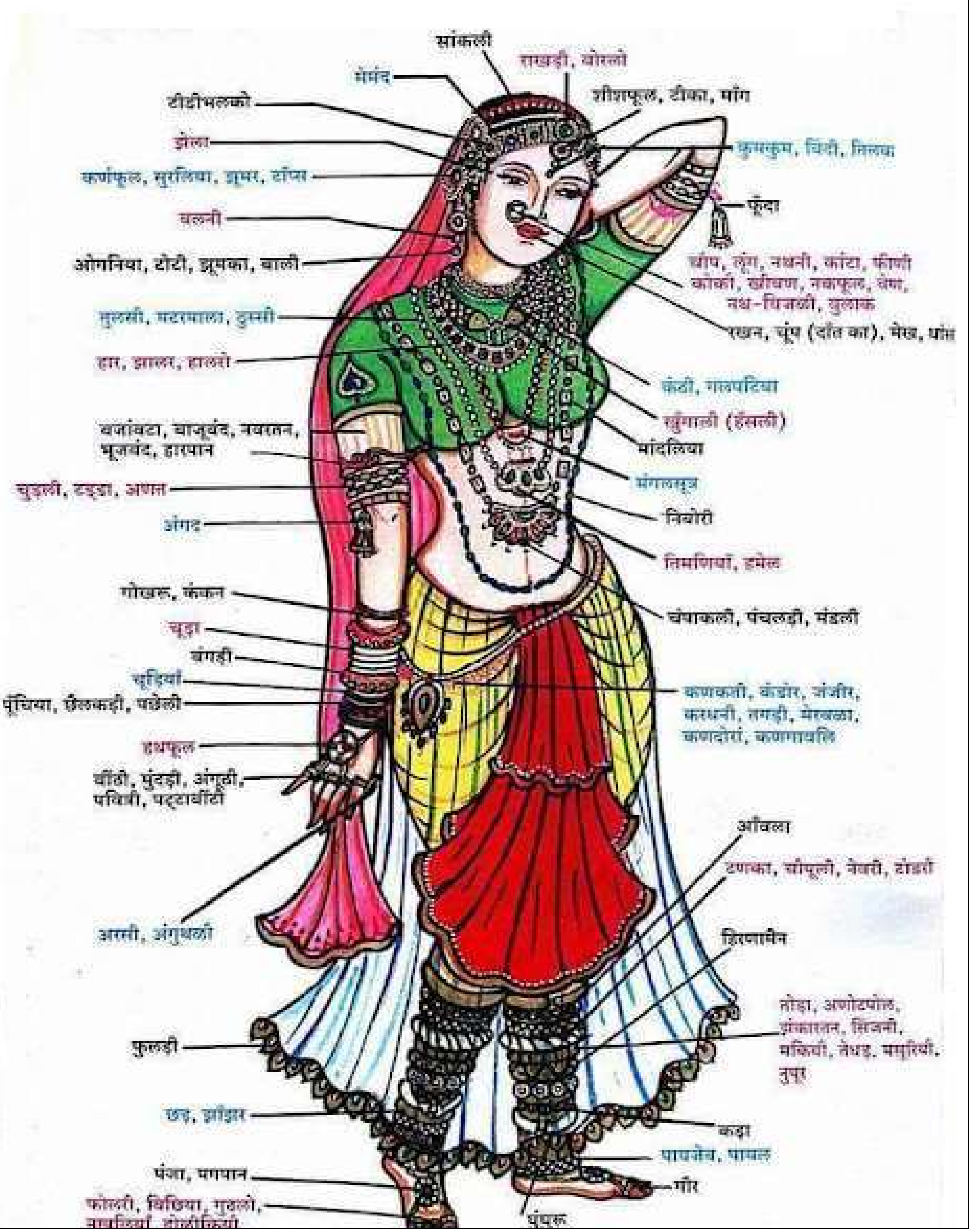

राजस्थानी वेशभूषा एवं पहनावा

कालीबंगा एवं आहड़ स्भ्यता के काल से ही राजस्थान में सूती वस्त्रों का प्रचलन था। इन स्थानों से उत्खनन में प्राप्त रुई काटने के चक्र और टाकली इस बात को सिद्ध करती है कि उस काल के लोग रुई के वस्त्रों का उपयोग करते थे।

A.पुरुषों के वस्त्र

1.पगड़ी

- यह पुरुषों द्वारा सिर पर धारण की जाती है एवं इसे साफा, पोतिया, पाग, बागा और पेंचा भी कहा जाता है।
- पगड़ी आन-बान और शान की प्रतीक मानी जाती है। पगड़ी को सजाने के लिए तुर्रे, सरपेच, बालाबन्दी, धुगधुगी, पछेवड़ी, लटकन, फतेपेच आदि का इस्तेमाल किया जाता है।
- जोधपुर की **खिड़कियाँ पाग** बहुत लोकप्रिय है। यहाँ मौसम एवं उत्सवों के अनुसार भिन्न-भिन्न प्रकार की पगड़ी पहनी जाती है जैसे श्रावण में लहरिया पगड़ी, विवाहोत्सव पर मोठड़े की पगड़ी, दशहरे पर भदील पगड़ी एवं होली पर फूल-पत्ती की छपाई वाली पगड़ी का प्रयोग होता है।
- सुनार आंटे वाली पगड़ी तथा बंजारे मोटी पट्टेदार पगड़ी का प्रयोग करते थे।
- राजस्थान में कई किस्म एवं शैलियों की पगड़ियाँ प्रचलित है जैसे- अटपटी, अमरशाही, उदेशाही, खंजरशाही, शिवशाही, विजयशाही एवं शाहजहाँनी ।

2.अंगरखी

- इसे पुरुषों द्वारा शरीर के ऊपरी भाग में पहना जाता है।
- इसे बुगतरी, तनसुख, दुतई, गाबा, गदर, मिरजाई आदि नामों से भी जाना जाता है।

3.अचकन

- पुरुषों द्वारा शरीर के ऊपरी भाग में पहने जाने वाला परिधान होता है जो घुटनों तक लंबा होता है। इसका मुस्लिम समुदाय में अधिक प्रचलन है।

4.चोगा

- यह एक लंबी आस्तीन वाला घेरदार परिधान है जो पुरुषों द्वारा अंगरखी के ऊपर पहना जाता है।

5.धोती

- यह पुरुषों की पारंपरिक वेशभूषा है जिसे कमर के नीचे पहना जाता है।

6.बिरजस/ब्रीचेस

- यह एक चूड़ीदार पायजामेनुमा वस्त्र होता है जो पैरों से घुटनों तक तंग तथा घुटनों से कमर तक घेरदार चौड़ा होता है। इसे आमतौर पर घुड़सवारी एवं उत्सवों के दौरान पहना जाता है।

7.कमरबंद/पटका

- यह कमर पर बाँधे जाने वाला पट्टीनुमा वस्त्र है जिसमें तलवार आदि रखी जाती है।

8.पछेवड़ा

- यह मोटी कंबल की तरह का वस्त्र है जो सर्दी के दिनों में ओढ़ने के लिए प्रयोग लिया जाता है।

9.घूघी

- ऊन से बनी घूघी अरशा एवं सर्दी से बचाव हेतु ओढ़ी जाती है।

10.आतमसुख

- यह प्राय: तेज सर्दी में ओढ़ा जाता है एवं इसकी तुलना कश्मीरी फिरन से की जा सकती है।

B. महिलाओं की वेशभूषा

1.ओढ़नी

- स्त्रियाँ सिर, चेहरा एवं ऊपरी शरीर को ढकने के लिए ओढ़नी का प्रयोग करती है।
- पोमचा, लहरिया, मोठड़ा एवं लूगड़ा आदि ओढ़नियों के विभिन्न प्रकार है।
- पोमचा एक प्रकार की ओढ़नी है जिसका अर्थ है कमाल फूल के अभिप्राय युक्त ओढनी, जो नवजात शिशु की माँ के लिए उसके मातृपक्ष की ओर से आता है। पुत्र जन्म पर पीला पोमचा एवं पुत्री जन्म पर गुलाबी पोमचा देने क प्रथा है।
- लहरिया श्रावण मास में तीज पर विशेष रूप से पहना जाता है एवं लूगड़ा विवाहित स्त्रियों द्वारा पहना जाता है।
- होली के अवसर पर फागणियाँ लहरिया पहना जाता है एवं लाल रंग की ओढ़नी जिस पर धागों से कसीदाकारी होती है, दामणी कहलाती है।
- पाँच संख्या को शुभ माना जाने के कारण मांगलिक अवसरों पर पचरंगा लहरिया पहना जाता है। लहरिये के प्रकार निम्न है
  - ‘प्रतापसाही’ लहरिया का उल्लेख साहित्य में मिलता है।
  - राजशाही लहरिया: जयपुर के रंगरेज यह लहरिया रंगते थे जिसमें चमकदार गुलाबी रंग की आड़ी रेखाएं बनती थी।
  - समुद्र लहरिया: इसमें चौड़ी-चौड़ी धारियां बनती है, यह दो, तीन पाँच व सात रंगों में बनता है।

2.कुर्ती और काँचली

- काँचली आस्तीन वाला एक आंतरिक वस्त्र होता है जो महिला के शरीर के ऊपरी हिस्से में पहना जाता है।
- कुर्ती बिना बाँह के ब्लाउज की तरह का एक वस्त्र होता है जो काँचली के ऊपर पहना जाता है। यह महिलाओं के शरीर को गर्दन से कमर तक ढकता है।

3.तिलका

- यह मुस्लिम स्त्रियों का पहनावा है।

4.दामड़ी

- मारवाड़ की स्त्रियाँ लाल रंग की ओढ़नी, जिस पर धागों की कसीदाकारी होती है, पहनती है, इसे दामड़ी कहा जाता है।

C. आदिवासियों के प्रमुख वस्त्र

1.अंगरखा

- इसे पुरुषों द्वारा कमर के ऊपर पहना जाता है एवं इस पर सफेद धागे से कढ़ाई की जाती है। इसे सुंदर बनाने के लिए इस पर फूल, सितारे एवं ज्यामितीय आकृतियाँ बनाई जाती है।

2.अंगोछा

- इसे सिर पर पहना जाता है एवं इसके किनारों पर कंगूरे छपे होता है।

3.कटकी

- इसे अविवाहित लड़कियों द्वारा सिर पर ओढ़ा जाता है।

4. नांदणा या नानड़ा

यह आदिवासी महिलाओं में प्रचलित सबसे प्राचीनतम पोशाक है। यह नीले रंग की छींट होती है जिस पर तितली भांत (प्रकार) के चतुष्कोण बने होते है।

5.रेनसाई

यह महिलाओं द्वारा पहने जाने वाली एक प्रकार की साड़ी है।

6.जामसाई साड़ी

यह विवाह के अवसर पर आदिवासी महिलाओं द्वारा पहने जाने वाली साड़ी है।

7.कछाबू

आदिवासी महिलाओं के घुटनों तक के घाघरे को कछाबू कहा जाता है।

8.फूदड़ी

यह आदिवासी महिलाओं का वस्त्र है जिस पर षट्कोणीय आकृति में बने तारें बने होते है।

9.केरी भांत की ओढ़नी

केरी छोटा कच्चा आम होता है। इस ओढ़नी के किनारों एवं पल्लू पर केरी छपी होती है एवं मुख्य भाग पर छोटी-छोटी बिंदियाँ बनी होती है।

10.ज्वार भांत की ओढ़नी

इस ओढ़नी के दोनों ओर लाल रंग की छोटी-छोटी बिंदियाँ एवं लाल रंग के बेल-बूटे छपे होते है।

11.तारा भांत की ओढ़नी

यह लाल रंग की ओढ़नी है जिसकी जमीन (पृष्ठभूमि) भूरे रंग की होती है। इसके किनारों पर छोर तारों जैसा षट्कोणीय आकृति में दिखाई देता है।

12.लहर भांत की ओढ़नी

यह ज्वार भांत की बिन्दियों से निर्मित लहरियाँ होता है।

**राजस्थान में साड़ियों के विविध नाम प्रचलित थे- चोल, निचोल, पट, दुकूल, अंसुक, वसन, चीर-पटोरी, चोरसो, धोरावाली आदि।

** स्त्रियाँ के परिधानों के लिए कई प्रकार के कपड़े प्रचलित थे जिन्हें जामादानी, किमख़ाब, टसर, छींट, मलमल, मखमल, पर्चा, मसरू, चिक, इलायची, महमूदी चिक, मीर-ए-बादला, नौरंगशाही, बहादुरशाही, फर्रूखशाही, बाफ़्ता, मोमजामा, गंगाजली आदि।

राजस्थान की प्रथाएँ एवं रीति-रिवाज

1.नाता प्रथा

- यह भीलों व अन्य आदिवासी जातियों में प्रचलित प्रथा है जिसमें पत्नी अपने पूर्व पति को छोड़कर अपनी पसंद के किसी अन्य पुरुष के साथ जीवन व्यतीत करती है।

2.केसरिया

- राजपूत योद्धाओं द्वारा पराजय की स्थिति में या शत्रु के समक्ष आत्मसमर्पण करने के बजाय केसरिया वस्त्र धारण कर शत्रु पर टूट पड़ना एवं मातृभूमि की रक्षार्थ शहीद हो जाना, केसरिया कहलाता था।
- केसरिया का उद्देश्य शत्रु के समक्ष आत्मसमर्पण के बजाय युद्ध में लड़कर वीरगति को प्राप्त करना होता था।

3.जौहर

- जब राजपूत योद्धाओं द्वारा केसरिया किया जाता था तब राजपूत वीरांगनाओं द्वारा शत्रु से अपने सतीत्व व आत्मसम्मान की रक्षार्थ किया जाने वाला सामूहिक अग्नि-स्नान, जौहर कहलाता है।

4. सती प्रथा

- इस प्रथा के अंतर्गत पत्नी स्वेच्छा से अपने पति के शव के साथ चिता में जीवित जलकर मृत्यु को वरण करती है।
- प्राचीनकाल में इस प्रथा को अद्वितीय एवं सर्वोच्च बलिदान का प्रतीक माना जाता था, किन्तु मध्यकाल में इसे स्त्री की इच्छा के विपरीत परिवार की मर्यादा एवं प्रतिष्ठा बनाए रखने के लिए किया जाने लगा अतः इस काल में इस प्रथा ने भयावह रूप धारण कर लिया था। इस प्रथा को सहगमन भी कहा जाता है।
- राजस्थान में सर्वप्रथम बूँदी रियासत ने 1822 ई. में इस प्रथा को गैर-कानूनी घोषित किया था।
- राजा राम मोहन राय के प्रयत्नो से 1829 ई. में गवर्नर जनरल लॉर्ड विलियम बैंटिक ने एक अधिनियम पारित कर इस प्रथा को अवैध घोषित कर दिया था।
- अलवर प्रथम राजपूत राज्य था जिसने 1829 ई. के कानून के बाद सबसे पहले 1830 ई. में इस प्रथा को गैर-कानूनी घोषित किया था।
- निम्नलिखित रियासतों ने इस प्रथा पर प्रतिबंध लगाए थे

जयपुर: 1844 ई. में

जोधपुर: 1848 ई. में

उदयपुर: 1861 ई. में

कोटा: 1862 ई. में

5.मानव व्यापार / दासों का क्रय-विक्रय

- राजस्थान में प्राचीन काल से ही मनुष्यों का व्यापार दासों की खरीद-फरोख्त के रूप में होता था। आम तौर में युद्ध के कैदियों को दास के रूप में बाजार में बेचा व खरीदा जाता था।
- राजस्थान में मानव व्यापार पर प्रतिबंध सर्वप्रथम 1847 ई. में जयपुर रिजेन्सी कौंसिल के अध्यक्ष जॉन लुडलो के प्रयासों से लगाया गया था।
- उदयपुर में 1863 ई. में एवं कोटा में 1867 ई. में इस प्रथा को गैर-कानूनी घोषित किया गया था।

6.समाधि प्रथा

- इस प्रथा के अंतर्गत व्यक्ति मृत्यु को वरण करने के उद्देश्य से स्वयं को जल में डूबोकर एवं भूमि में दफनाकार अपने प्राण त्याग देता है। आमतौर पर साधू-महात्माओं एवं धार्मिक गुरुओं द्वारा इस प्रथा का पालन किया जाता था।

- राजस्थान में सर्वप्रथम जयपुर रियासत द्वारा 1844 ई. में इस प्रथा को गैर-कानूनी घोषित किया गया था। यह कार्य जयपुर रिजेन्सी कौंसिल के अध्यक्ष जॉन लुडलो के द्वारा किया गया था।

7.कन्यावध

- मध्यकाल में राजस्थान में विशेषत: राजपूतों में प्रचलित इस प्रथा में कन्या के जन्म लेते ही उसे मार दिया जाता था।
- राजस्थान में ब्रिटिश शासन के अधिक प्रभावी होते ही अंग्रेज सरकार ने रियासतों को कन्यावध पर रोक लगाने के आदेश दिये।
- कैप्टन हॉल ने केंद्रशासित क्षेत्र मेरवाड़ा की मेर-पंचायत में इस प्रथा पर प्रतिबंध लगवाया था।
- राजस्थान में सर्वप्रथम हाड़ौती के पॉलिटिकल एजेंट एजेंट विलकिंसन के प्रयासों से कोटा रियासत ने 1834 ई. में इस प्रथा को गैर-कानूनी घोषित किया था एवं उस काल में महाराव उम्मेदसिंह कोटा के शासक थे।

8.डाकन प्रथा

- इस प्रथा में स्त्रियों को डाकन होने के संदेह में शारीरिक एवं मानसिक यातनाएँ व निर्मम अत्याचार किए जाते थे। कई मामलों में डाकन होने के संदेह के स्थिति में स्त्रियों को मार भी डाला जाता था।
- राजस्थान में कई जातियों विशेषकर मीणा एवं भील जातियों में यह प्रथा अधिक प्रचलित थी।
- राजस्थान में सर्वप्रथम महाराणा स्वरूप सिंह ने ब्रिटिश सरकार की सलाह पर 1853 ई. में उदयपुर में इस प्रथा को गैर-कानूनी घोषित किया था। डाकन प्रथा पर यह प्रतिबंध भीलों द्वारा अपनी प्रथाओं व मान्यताओं पर अंग्रेजी हस्तक्षेप के रूप में माना गया। अत: यह आगामी जनजातीय आंदोलनों का प्रमुख कारण बना।

9.त्याग प्रथा

- राजपूत परिवारों में कन्या के विवाह के समय कन्या के पिता द्वारा चारण, ढोली, भाट व अन्य जाति के लोगों को स्वेच्छा से दान-दक्षिणा दी जाती थी, जिसे त्याग कहा जाता था।
- कालांतर में चारण, भाट आदि द्वारा हठपूर्वक मुँह-माँगी दान-दक्षिणा की माँग की जाने लगी जिसके फलस्वरूप यह वधू पक्ष के लिए अतिरिक्त बोझ बन गया। सर्वप्रथम जोधपुर राज्य द्वारा इस प्रथा को सीमित करने का प्रयास किया गया।

10.बाल-विवाह

- इस प्रथा के अंतर्गत बच्चों की विवाह बिना ज्ञान व सहमति के कर दिया जाता है। राजस्थान में आज भी आखा तीज के दिन बड़े पैमाने पर बाल-विवाह होते है।
- समाज सेवी हरविलास शारदा के प्रयत्नों से 1929 ई. में **शारदा एक्ट** पारित हुआ, जिसके अनुसार लड़कों एवं लड़कियों के लिए विवाह की न्यूनतम आयु क्रमश: 18 वर्ष व 15 वर्ष निर्धारित की गयी।
- इस अधिनियम से पूर्व जोधपुर के प्रधानमंत्री सरप्रताप द्वारा इस प्रथा के विरोध में प्रतिबंधक कानून बनाया गया था।

11.विधवा विवाह

- वर्तमान समय में भी विधवा का जीवन अत्यंत कष्टपूर्ण होता है। अत: हम कल्पना कर सकते है कि मध्यकाल में विधवा महिला का जीवन अत्यंत नारकीय एवं असहनीय रहा होगा।
- समाज सेवी ईश्वरचंद विद्यासागर के अथक प्रयासों के फलस्वरूप लॉर्ड डलहोजी ने विधवाओं को इस दुर्दशा से मुक्त करने हेतु 1856 ई. में विधवा पुनर्विवाह अधिनियम बनाया था।
- आर्य समाज के कार्यकर्ता चाँदकरण शारदा ने विधवा विवाह को प्रोत्साहित करने के लिए “विधवा-विवाह” नामक पुस्तक लिखी।

12.सागड़ी प्रथा/ बँधुआ मजदूर प्रथा

- इस प्रथा के अंतर्गत किसी व्यक्ति को स्थानीय जमींदारों, साहूकारों आदि के द्वारा उधार दी गयी राशि के बदले उम्र भर नौकर के रूप मे कार्य करने के लिए विवश किया जाता था एवं कार्य के बदले में उसे कोई वेतन नहीं दिया जाता था।
- 1961 ई. में राजस्थान सरकार ने सागड़ी निवारण अधिनियम पारित करके बंधुओं मजदूरों को पूँजीपति जमीदारों व महाजाओं के चुंगल से मुक्ति दिलवाने का प्रयास किया था।

13.हलमा

- यह सामूहिक सहयोग की एक द्वितीय परंपरा है, जिसमें सभी लोग मिलकर नि: स्वार्थ रूप से एक दूसरे के कार्यों जैसे घर बनाना, खेत जोतना आदि में सहयोग करते है।

14.झगड़ा

- यह एक प्रतिपूर्ति राशि होती है जिसे उस व्यक्ति द्वारा माँगी जाती है जिसकी पत्नी उसे छोड़कर किसी अन्य व्यक्ति के पास चली जाती है।
- इस राशि का निर्धारण पंचायत द्वारा किया जाता है एवं दूसरे व्यक्ति को पूर्व पति को यह राशि देना अनिवार्य होता है।

15.दापा

- यह प्रथा कई आदिवासी जनजातियों में प्रचलित है जिसमें वर पक्ष को शादी के लिए वधू के पिता को कुछ राशि का भुगतान करना होता है। इस राशि को ही दापा कहा जाता है।

16.मौताणा

- यदि किसी आदिवासी की किसी दुर्घटना या अन्य कारण से मृत्यु हो जाती है तो आरोपी व्यक्ति को मृतक के परिवार को एक निश्चित राशि का भुगतान करना होता है। यह निश्चित राशि ही मौताणा कहलाती है।
- इस राशि का निर्धारण पंचायत द्वारा किया जाता है। आरोपी को इसे मृतक के परिवार को देना अनिवार्य होता है एवं मौताणा मिलने पर ही मृतक का परिवार शव को घटना स्थल से उठाता है।

17.छेड़ा फाड़ना

- यह प्रथा आदिवासियों द्वारा तलाक लेने का एक तरीका है जिसमें आदिवासी व्यक्ति पंचायत के सामने अपनी पत्नी की साड़ी एक हिस्सा फाड़ता है एवं ऐसा करना करना पति द्वारा अपनी पत्नी का त्याग करना समझा जाता है।

18.नातरा/ आणा

- आदिवासियों में विधवा स्त्री का पुनर्विवाह करना, नातरा/आणा प्रथा कहलाती है।

19.कूड़की रस्म

- यह साँसी जाति की एक रस्म है जिसमें नवविवाहिता को विवाह उपरांत अपनी चारित्रिक पवित्रता की परीक्षा देनी होती थी।

20.टीका

- विवाह निश्चित होने जाने पर लड़की के पिता या कन्या-पक्ष की ओर से लड़के के लिए दिये जाने वाले उपहार, टीका कहलाते है।

21.रीत

- विवाह निश्चित होने पर लड़के वालों की तरफ से लड़की को भेजे जाने वाले उपहार, रीत कहलाते है।

22.सामेला

विवाह के दौरान जब वर वधू के यहाँ पहुँचता है तो वधू के पिता द्वारा अपने सगे-संबंधियों के साथ वर पक्ष का स्वागत किया जाता है इस प्रथा **को सामेला कहा जाता है।**

23.पीठी

- 'वर' व 'वधू' का सौंदर्य निखारने हेतु स्त्रियों द्वारा उनके शरीर पर लगाया जाने वाला हल्दी व आटे का उबटन, पीठी कहलाता है।

24.फेरा

- वर वधू परिणय सूत्र में अग्नि के समक्ष सात फेरे लगाकर एक दूसरे को सात वचन देते है।

25.सीख

- विवाह बाद वर-वधू एवं बारातियों को उपहार देकर विदा किया जाता है इन उपहारों को सीख कहा जाता है।

26.औलन्दी

- नववधू के साथ जाने वाली लड़की अथवा स्त्री को औलन्दी कहा जाता है।

27.जांनोटण

- विवाह के दौरान वर-पक्ष की ओर से दिया जाने वाला भोज जांनोटण कहलाता है।

28.मौसर

- मृत्यु भोज की प्रथा को मौसर कहा जाता है।
- कुछ व्यक्ति जीवित अवस्था में ही मौसर करते है, जिसे जौसर कहते है।

29.मुगधणा

- विनायक स्थापना के पश्चात भोजन पकाने के लिए काम में ली जाने वाली लकड़ियाँ, मुगधणा कहलाती है।

30. बढार का भोज

- विवाह के मौके पर दिये जाने वाला समूहिक प्रतिभोज, बढार का भोज कहलाता है।